Le'fr'k"k % ukVddkj&lxhrdkj Qknj ihVj iky ouQy

सीप्रियन एक्का, ये॰ सं॰

गर्मी की लम्बी छुट्टी। वर्ष 1973 ई॰। सन्त अलोईस प्रेरितिक विद्यालय, गुमला। दर्जन–भर छात्र छुट्टी में घर न जाकर विद्यालय में ही रखरखाव के कार्य में लगे हैं। वीरान पड़े विद्यालय में उनकी उपस्थिति से सुरक्षा तो होती ही है, बदले में परिवार की आर्थिक तंगी से जूझनेवाले उन लड़कों की फीस में भी रियायत मिलती है। पुरोहिती लबादे को कमर तक उठाये हुए, साईकिल पर सवार फादर पीटर पौल वनफल इन दिनों कभी–कभार ही विद्यालय के बागों में एकाध चक्कर लगा जाते हैं। “फकीरा, ऐ फकीरा!” यह विद्यालय का रसोइया है। फादर उसे कुछ निर्देश देकर आगे बढ़ जाते हैं। सब्जी–बगान में काम करनेवाले श्रमिक और विद्यार्थी फादर की पुकार से सतर्क हो जाते हैं। मिलने पर फादर हमेशा उनसे कुछ–न–कुछ कह जाते हैं, हाल–चाल पूछ जाते हैं। छरहरा कद और फ्रेन्चकट दाढ़ीवाले फादर वनफल इस स्कूल के निदेशक हैं। जन्म से बेल्जियन होकर भी वे सन्त इग्नासियुस उच्चविद्यालय में हिन्दी साहित्य पढ़ाते हैं। वाक्पटुता कोई उनसे सीखे! एक मुस्कान हमेशा की तरह उनके चेहरे पर खिंची हुई।

फादर वनफल इन दिनों ज्यादातर समय अपने कमरे में बन्द हैं। नाटक लिख रहे हैं। किस विषय पर, किस कहानी पर –– यह किसी को नहीं मालूम। पूछने पर, “देखते जाओ, बहुत मजा आएगा!” फिर वही बत्तीसी मुस्कान।

पैर में गहरे जख्म के कारण मैं छुट्टियों में घर नहीं जा सका था। पाँव पूरी तरह सूजा हुआ था। समय निकालकर फादर वनफल मुझे अपने कमरे में बुला लेते और मेरे घाव को खुद साफ करते। फिर दवा की शीशी को दिखाकर कहते, “बाबू, (लड़कों के लिए उनका चिरपरिचित सम्बोधन) यह विदेश से मंगाई हुई दवाई है। खास तुम्हारे लिए। इससे तुम बहुत जल्द चंगे हो जाओगे।” सामान्य–सी वस्तु को तिलस्म में लपेटकर पेश करना उनका खास अंदाज हुआ करता था। वे भली–भांति जानते थे कि बच्चों–किशोरों को नयापन और रहस्य बहुत भाते हैं। रहस्य की चाशनी उनपर उंडेलो और वे सरपट दौड़ पड़ेंगे। फिर वह चाहे रंगमंच हो, खेल मैदान हो, पढ़ाई–लिखाई हो, गान–भजन हो या फिर कुछ और। फादर की इस अचूक विधा के कई उदाहरण मुझे याद हैं, परन्तु फिलहाल यहीं तक। खैर, जादुई उपचार के बाद मैं लंगड़ाता हुआ उनके कमरे से निकलता और कहानी–उपन्यासों में रम जाता।

छुट्टी के लगभग ढाई सप्ताह गुजरे होंगे। मेरी तीमारदारी के दौरान एक दिन उन्होंने पूछा, “बाबू, जानते हो, नाटक में तुम्हें कौन–सा किरदार मिलेगा?” मैं सकपका गया। वे मजे लेकर बोले, “तुम्हें प्रोम्पटर बनना होगा।” प्रोम्पटर अर्थात् कलाकारों को भूले–बिसरे संवाद नेपथ्य से खिलाने–पिलाने वाला। रंगमंच अथवा किसी भी सार्वजनिक मंच से दूर भागने वाले मुझ जैसे किशोर के लिए उनकी बातें भा गईं।

छुट्टियाँ समाप्त हुईं। विद्यालय फिर लड़कों की चहल–पहल से भर गया। एक शाम को स्टडी हॉल में आकर फादर ने चार–पाँच नाम पुकारे। कहा, “अपने साथ कागज कलम लेकर ऊपर वाले डोरमेटरी में आ जाओ।” हम पहुँचे। फादर के हाथ में कागजों का एक पुलिंदा था –– आड़ी–तिरछी लकीरों सहित उनकी मातृभाषा फ्लेमिश में लिखी पाण्डुलिपि के कई पन्ने। उन्हें मेज पर पसार कर उन्होंने राज खोलनेवाले अंदाज में कहा, “बाबू, तुम्हारा नाटक तैयार है। चलो, अब लिखो।” दो–तीन बैठकों में उन्होंने अपने नये (और आखिरी) नाटक का श्रुतिलेख हिन्दी में करा डाला। नाटक–लेखन का उनका यह तरीका था। कमप्यूटर का जमाना आमजनों तक पहुँचा नहीं था। जब लिखना समाप्त हो चुका तो उन्होंने मेरी प्रति को अपने पास रख लिया और उसपर आगे काम करने लगे। समय–समय पर वे किन्हीं भागों को पढ़कर मुझे सुनाते और पूछते, “बाबू, यह कैसा लगा?” मैं भला क्या कहता! मेरे संकोच से वे अवगत थे। उन्होंने कहा, “इस नाटक को संवारने में मेरा सहयोग करो। खुलकर बोलो, चाहे जो भी उचित जंचे।” जल्द ही हम दोनों बहस करते हुए पग–पग पर काट–छाँट करने लगे और नाटक कुछ ही दिनों में तैयार हो गया। “टूटे डैने” नामक इसका शीर्षक तबतक अस्तित्व में नहीं आया था।

पुनः एक शाम को फादर वनफल हमारे स्टडी हॉल में पधारे। उन्होंने अपने खास अंदाज में कहा कि नाटक तैयार है; कलाकारों का लिस्ट भी मैंने बना लिया है। पहले उन्होंने संक्षेप में नाटक का कथानक बताया और छोटी–छोटी भूमिकाओं से आरम्भ कर लड़कों के नाम पुकारते गए। मैं आश्वस्त था कि मुझे तो प्रोम्पटर ही बनना है। अतः मुझमें सामान्य–सी उत्सुकता थी। अन्त में मुख्य पात्र की घोषणा का समय आ पहुँचा। उन्होंने कुछ चुहलबाजी के बाद मेरा नाम पुकारा। मेरे पैरों तले धरती खिसकती जान पड़ी, कानों में कुछ सांय–सांय की आवाज! साथियों की बधाइयाँ जैसे किसी कंदरा में गूंजती हुई प्रतीत हुईं। मैं सीधे पहुँचा फादर के दरवाजे पर। हकलाते हुए बोला, "फादर, मुख्य पात्र तो क्या, मैं अभिनय ही नहीं करूंगा। मैं प्रोम्पटर ही ठीक हूँ। अभिनय वगैरह मेरे वश की बात नहीं है।" उन्हें भली–भांति अंदाज था कि मेरी कुछ ऐसी ही प्रतिक्रिया होगी। वे तैयार थे, "बाबू, मैंने इस नाटक के मुख्य पात्र को तुम्हें ही ध्यान में रखकर उकेरा है। इसमें कोई बदलाव नहीं होगा। चलो, अब जाओ।"

मैं कई रातें सो नहीं पाया। बुझे मन से ही नाटक–अभ्यास के लिए पहुँचता। हरदम यही आशा रहती कि फादर जल्द ही किसी और को मेरा किरदार थमा देंगे, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। वे खुद अभिनय कर–करके नाटक के सब पात्रों को सिखाने लगे। तभी ज्ञात् हुआ कि वे कमाल का अभिनय भी करते थे; वह भी सब प्रकार के अभिनय। नाटक का मंचन 31 जुलाई को सन्त इग्नासियुस लोयोला के पर्वदिवस पर धूमधाम से स्कूल के प्रेक्षागृह में हुआ। अंतिम मंचन सन्त अल्बर्ट सेमिनरी राँची में हुआ। फादर वनफल के अन्य नाटकों की तरह खूब चर्चा भी हुई।

"बुझाओ रे ठठोली", "बदलता किला", "उठा तूफान जगा इन्सान" और "टूटे डैने"। अपनी इन नाट्यकृतियों में से फादर वनफल द्वारा ही सर्वश्रेष्ठ माने जाने वाले "बुझाओ रे ठठोली" में उनकी कल्पनाशीलता, संगीतमयता, काव्यात्मकता और कथा–शैली का अनोखा सम्मिश्रण अपने चरम पर है। भले ही उनके नाटकों में महिला पात्रों की व्यवस्था नहीं रही हो, परन्तु उद्वेलित युवामन को सुकार्य के लिए उत्प्रेरित करने का भरपूर प्रयास रहा है। आगे चलकर उन्होंने युवकों और युवतियों के आध्यात्मिक–चारित्रिक गठन के लिए "जीवन–प्रवेश" नामक कार्यशाला ही रच डाला। संक्षेप में, सन्त इग्नासियुस की आध्यात्मिकता के अनुरूप सम्पूर्ण चरित्र–निर्माण। वे मुखर रूप से कहते भी थे कि युवाओं की न केवल अच्छी परवरिश होनी चाहिए, बल्कि हमें उनके भविष्य को भी आशावर्द्धक बनाना चाहिए। ऐसा नहीं होने से ही युवाजन निराशापूर्ण भटकाव में उलझ जाते हैं। उन्होंने देखा था कि अधिकांश आदिवासी युवा पढ़ाई–लिखाई मात्र से अपना भविष्य अधिक संवार नहीं पाते हैं, जबकि उनमें गजब की शारीरिक क्षमता होती है। इसीलिए उन्होंने युवाओं को क्रीड़ा के लिए प्रोत्साहित किया; वह भी स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक। इस तथ्य की विस्तृत चर्चा इस संस्मरण की विषयवस्तु नहीं है।

ubl i t ufof/k d xk;d Qknj ouQy

द्वितीय वाटिकन महाधर्मसभा के बाद कलीसिया में अभूतपूर्व नवीकरण का दौर आया। लैटिन भाषा की पूजन–विधि का अनुवाद स्थानीय भाषाओं में हुआ। तब भी अधिकांश गीत–संगीत ग्रेगोरियन पद्धति के थे। किन्हीं संगीत–प्रेमियों की तरह फादर वनफल ने अपनी संगीत–प्रतिभा और हिन्दी भाषा में विलक्षण पकड़ का परिचय दिया। अन्य भक्तिगीतों के अलावा समारोही पवित्र मिस्सा के सम्पूर्ण गीतों की संगीतबद्ध रचना उन्होंने प्रामाणिक हिन्दी में की। बाद में मूल लैटिन रचनाओं से अनभिज्ञ अनेक रचनाकारों ने वस्तुतः उन्हीं की कृति के मूलभाव को लेकर अथवा थोड़ा–बहुत फेर–बदल करके समारोही पवित्र मिस्सा के गीतों की वैकल्पिक रचना की और आज भी विभिन्न स्थानीय भाषाओं में करते जा रहे हैं।

"पुरोहित है निराली निर्मल नदिया!" पुरोहिताभिषेक के दिन तन्मय करनेवाले इस सारगर्भित गीत के रचनाकार फादर पीटर पौल वनफल अब हमारे बीच नहीं रहे। उन्होंने येसु संघी पुरोहित के रूप में अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व, प्रतिभा और आध्यात्मिक गहराई से आजीवन मानव–मात्र की सेवा की। दयालु ईश्वर उन्हें अनन्त विश्राम और हमें प्रेरणा प्रदान करें।